तेरापंथ में संस्कृत का विकास

☐ मुनि श्री विमलकुमार, युगप्रधान आचार्यश्री तुलसी के शिष्य

विक्रम संवत् १८८१ की घटना है। उस समय आचार्य जयाचार्य (तेरापन्थ के चतुर्थ आचार्य) का सामान्य मुनि अवस्था में मुनि श्री हेमराज जी के साथ जयपुर चातुर्मास था। उस समय उन्हें मालूम पड़ा कि एक श्रावक का लड़का संस्कृत पढ़ता है। जय मुनि के मन में मुन हेमराजजी के पास आगमाध्ययन करते हुए उनकी संस्कृत टीका पढ़कर और अधिक सामर्थ्य प्राप्त करने की अभिलाषा उत्पन्न हुई थी पर अवैतनिक अध्यापक के अभाव में वह पूर्ण नहीं हो सकी। जब उन्हें ज्ञात हुआ अमुक श्रावक का लड़का संस्कृत का अध्ययन करता है तब उनके मन में उससे संस्कृत पढ़ने की इच्छा हुई। एक दिन जब वह बालक दर्शनार्थ आया तब उन्होंने कहा—तुम दिन में जो संस्कृत पढ़ते हो वह मुझे रात्रि में बताओगे क्या? यह सुन उसने सहर्ष स्वीकृति देते हुए कहा—इससे तो मुझे दोहरा लाभ होगा। पढ़े हुए पाठ की पुनरावृत्ति हो जायेगी तथा आपकी सेवा का अवसर प्राप्त होगा। तत्पश्चात् वह प्रतिदिन रात्रि में आने लगा और दिन में जो कुछ भी पढ़ता उसे जय मुनि को बता देता। जय मुनि उन सुने हुए व्याकरण सूत्रों को वृत्ति सहित तत्काल कंठस्थ कर लेते और दूसरे दिन उनकी साधनिका को राजस्थानी भाषा में पद्य-बद्ध कर देते थे। इस प्रकार जय मुनि ने श्रम करके संस्कृत व्याकरण का अध्ययन किया। उन्हीं ने सर्वप्रथम तेरापंथ धर्म संघ में संस्कृत का बीज बोया। कालान्तर में जय मुनि तेरापंथ के चतुर्थ आचार्य बने। उन्होंने अपने समय में संघ में संस्कृत भाषा को प्रोत्साहन दिया। उनकी पावन प्रेरणा से मुनि मघराजजी ने संस्कृत का अच्छा अध्ययन किया। वे संस्कृत के विद्वान् कहलाते थे। उन्होंने संस्कृत में कुछ स्फुट रचनाएँ भी कीं। मुनि मघराज जी की संसार पक्षीया बहिन साध्वी प्रमुखा गुलाबांजी ने सर्वप्रथम साध्वी-समाज में संस्कृत का अध्ययन किया था।

जयाचार्य के बाद मुनि मघराजजी तेरापंथ के पंचम आचार्य बने। वे अपने बाल मुनि कालूरामजी (छापर) को संस्कृत अध्ययन की प्रेरणा देते हुए कहते थे—संस्कृत हमारे आगमों की कुंजी है। आगम प्राकृत भाषा में है। उनकी टीकाएँ संस्कृत में लिखी हुई हैं। संस्कृत जानने वाला टीकाओं के माध्यम से आगमों के रहस्य को समझ सकता है। अतः हमें संस्कृत अवश्य पढ़नी चाहिए।[1] मघवागणी की पावन प्रेरणा से तथा उनकी छत्र-छाया में मुनि कालूराम जी ने संस्कृत का अध्ययन प्रारम्भ किया पर उसके पूर्णता तक पहुँचने पूर्व ही आचार्य मघराजजी का स्वर्गवास हो गया। मघवागणी के बाद तेरापंथ धर्म-संघ में संस्कृत का प्रवाह क्रमशः बन्द होने लगा।

मघवागणी के पश्चात् मुनि माणकलाल जी तेरापंथ के छठे आचार्य बने। वे कुछ वर्षों तक ही (वि० सं० १९४९ चैत्र कृष्णा अष्टमी से वि० सं १९५४ कार्तिक कृष्णा तृतीया) शासन कर पाये कि क्रूर काल अचानक उन्हें उठाकर ले गया। इस आकस्मिक निधन के कारण वे अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति भी नहीं कर सके। अतः तेरापंथ धर्म-संघ के सम्मुख एक जटिल समस्या उत्पन्न हुई। क्योंकि संघ के विधानानुसार भावी आचार्य का चुनाव वर्तमान आचार्य ही करते हैं। इस समुत्पन्न जटिलता को संघ के शासन-निष्ठ मुनियों ने मिलकर सुलझा दी और सर्व-सम्मति से मुनि डालचंद जी को तेरापंथ का सप्तम आचार्य घोषित कर दिया।

आचार्य डालगणी के शासनाकाल की घटना है। एक बार वे वि० सं० १९६० में बीदासर पधारे। उस

---

१. महामनस्वी आचार्य श्री कालूगणी का जीवन-वृत्त, पृ० ३८.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय हुकुमसिंह जी वहाँ के ठाकुर साहब थे। उनकी संस्कृत के प्रति अच्छी रुचि थी। अतः वे कुछ न कुछ संस्कृत पढ़ते या सुनते रहते थे। एक बार उन्हें निम्नलिखित श्लोक का अर्थ समझ में नहीं आया—

दोषास्त्वामरुणोदये रतिमितस्तन्वीरयातः शिवं,
यामैर्मामतथाः फलान्यदशुभं त्वय्याहतेऽङ्गे च काः।
नारामं तमजापयोधरहितं मारस्य रंगाह्रदः,
सोभाधी गृहमेधिनाऽपि कुविशामीशोऽसि नन्दादिभः॥[1]

जब उन्हें मालूम हुआ कि डालगणी यहाँ पधारे हुए हैं तब उन्होंने उस श्लोक को लिखकर डालगणजी के पास भेजा और अर्थ बताने का निवेदन किया। डालगणी ने उस श्लोक को मुनि कालूराम जी को दिया। पर वे उसका अर्थ नहीं बता सके। इस घटना से मुनि कालूराम जी के मन पर तीव्र प्रतिक्रिया हुई। उन्होंने पुनः संस्कृत पढ़ने का दृढ़ निश्चय किया तथा सारस्वत का पूर्वार्द्ध कंठस्थ करना शुरू कर दिया। कुछ दिनों के बाद डालगणी चुरू पधारे। वहाँ के शासन-निष्ठ श्रावक रायचंदजी सुराणा के द्वारा मुनि कालूरामजी का पंडित घनश्यामदासजी से सम्पर्क हुआ। पण्डितजी मुनि कालूरामजी के व्यक्तित्व से इतने प्रभावित हुए कि कई कठिनाइयों के बावजूद भी उन्हें अवैतनिक रूप से संस्कृत पढ़ाने के लिए तत्पर हो गये। जनके सहयोग से मुनि कालूरामजी अपने निश्चय की ओर गति करने लगे।

वि० सं० १९६६ भाद्रपद शुक्ला १२ को डालगणी का स्वर्गवास हो गया। उन्होंने अपने उत्तराधिकारी के रूप में मुनि कालूरास जी की नियुक्ति की। डालगणी के स्वर्गारोहण के बाद मुनि कालूरामजी तेरापंथ धर्म-संघ के अष्टम आचार्य बने। आचार्य बनने के बाद उन पर अनेक संघीय जिम्मेदारियाँ आ गईं। फिर भी उन्होंने संस्कृत अध्ययन को उपेक्षित नहीं किया। परन्तु उसमें और अधिक गति लाने का प्रयत्न करने लगे। इस प्रकार अभ्यास करने से आचार्य कालूगणी का संस्कृत भाषा पर अच्छा अधिकार हो गया। आचार्य बनने के बाद उन्होंने स्वप्न में एक वृक्ष को फलों, पुष्पों से लदा हुआ देखा। जिसका अर्थ उन्होंने यह किया कि अब हमारे संघ में संस्कृत का वृक्ष अवश्य ही फलित-पुष्पित होगा।

वि० सं० १९७४ का सरदारशहर चातुर्मास सम्पन्न पर आचार्य कालूगणी चुरू पधारे। उस वहाँ के यति रावतमलजी की प्रेरणा से आशुकवि पण्डित रघुनन्दन जी का आचार्य कालूगणी के साथ सम्पर्क हुआ। प्रथम सम्पर्क में ही पण्डितजी की अनेक भ्रान्त धारणाओं का निराकरण हुआ और उन्होंने कालूगणी के पास सम्यक् प्रकार से तेरापंथ की साधुचर्या की जानकारी प्राप्त की। दूसरे दिन उन्होंने "साधु-शतक" बनाकर उसकी प्रतिलिपि कालूगणी को अर्पित की। कालूगणी ने तीन घन्टे में बनाये हुए उस "साधु-शतक" को गौर से देखा और पण्डितजी की ग्रहण-शीलता और सूक्ष्ममेधा को परखा। तत्पश्चात् पण्डितजी आचार्य कालूगणी के प्रति समर्पित होकर तेरापंथ धर्मसंघ को अपनी सेवाएँ देने लगे। इस प्रकार संघ को पण्डित घनश्यामदासजी तथा पं० रघुनन्दनजी का अपूर्व सहयोग प्राप्त हुआ। उन दोनों के सहयोग से तथा आचार्य कालूगणी की पावन प्रेरणा से अनेक मुनियों ने संस्कृत के क्षेत्र में विकास किया। उस समय कई मुनियों ने संस्कृत में कालू कल्याण मन्दिर तथा कालू भक्तामर स्तोत्र की रचना की। उनमें मुनि तुलसीरामजी (आचार्य श्री तुलसी), मुनि कानमलजी, मुनि नथमल जी (बागौर), मुनि सोहनलाल जी (चुरू), मुनि धनराज जी (सिरसा) तथा मुनि चंदनमल जी (सिरसा) थे। मुनि चौथमलजी ने संस्कृत व्याकरण अध्येयताओं के लिए "कालू-कौमुदी" की रचना कर उनके अध्ययन को सुगम बना दिया। इसके साथ-साथ उन्होंने भिक्षु शब्दानुशासन जैसे विशालकाय ग्रन्थ की रचना की। इन रचनाओं में उन्हें पण्डित रघुनन्दनजी का अविस्मरणीय सहयोग मिला।

प्राचार्य कालूगणी के शासनकाल में साधुओं में संस्कृत भाषा की गति हो रही थी पर साध्वियों में विशेष नहीं। आचार्य कालूगणी की हार्दिक इच्छा थी कि साध्वियों में भी संस्कृत भाषा का विकास हो। पर उनका स्वप्न

१. महामनस्वी आचार्य श्री कालूगणी का जीवन-वृत्त, पृ० २६.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साकार होने के पूर्व ही निर्दय काल उन्हें उठाकर ले गया। आचार्य कालूगणी ने अपने स्वप्न को मूर्तिमान् करने का दायित्व अपने उत्तराधिकारी आचार्य श्री तुलसी को सौंपा और अन्तिम शिक्षा देते हुए उन्हें इस ओर विशेष ध्यान देने को कहा।

आचार्य श्री तुलसी ने जब शासन भार संभाला तब वे सिर्फ २२ वर्ष के थे। फिर भी उन्होंने अपनी कार्यजा शक्ति से सारे संघ को प्रभावित किया। उन्होंने साधुओं में संस्कृत-विकास के साथ-साथ साध्वियों के संस्कृत-विकास की ओर भी विशेष ध्यान दिया और अपना समय लगाया। साधु-साध्वियों के शैक्षणिक विकास को दृष्टिगत रखते हुए एक सप्तवर्षीय पाठ्यक्रम भी निर्धारित किया गया था। जिसकी अन्तिम योग्यता एम० ए० के समकक्ष थी। प्रतिवर्ष उसकी परीक्षाएँ भी होती थीं। उनमें उत्तीर्ण होकर अनेक साधु-साध्वियों ने विशेष योग्यता प्राप्त की। वर्तमान में यह अध्ययनक्रम बन्द है। इसके स्थान पर जैन विश्व भारती के शिक्षा विभाग द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम का अध्ययन कराया जाता है।

आचार्य श्री तुलसी के शासनकाल में साधु-साध्वियों के शैक्षणिक विकास में विशेष गति हुई। वर्तमान में अनेक साधु-साध्वियाँ संस्कृत भाषा में धारा प्रवाह बोलने में समर्थ हैं। संस्कृत-लेखन में भी उनकी लेखनी अबाध-रूप से चलती है।

आचार्य प्रवर तथा आचार्य महाप्रज्ञ के अतिरिक्त कई मुनियों की संस्कृत भाषा में रचित कृतियाँ भी प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका विवरण इस प्रकार है—

१. आचार्य तुलसी द्वारा रचित—भिक्षु न्याय कर्णिका, मनोऽनुशासनम्, जैन सिद्धान्त दीपिका, पंचसूत्रम्, शिक्षाषण्णवति तथा कर्त्तव्य-षट्त्रिंशिका।
२. युवाचार्य महाप्रज्ञ द्वारा रचित—अश्रुवीणा, मुकुलम्।
३. मुनि श्री चंदनमल जी द्वारा रचित—ज्योतिःस्फुलिंगम्, अनुभव शतकम्, अभिनिष्क्रमणम्, आर्जुनमालाकारम्, प्रभव-प्रबोध, वर्धमान शिक्षा सप्तति, संवर-सुधा इत्यादि।
४. मुनि श्री सोहनलाल जी द्वारा रचित—देवगुरुधर्मस्तोत्र।
५. मुनि श्री बुद्धमल जी द्वारा रचित—उत्तिष्ठ जागृत।
६. मुनि श्री धनराजजी (लाडनूं) द्वारा रचित—भावभास्करकाव्य।

ऊपर में उन्हीं कृतियों का उल्लेख किया गया है जो प्रकाशित हैं। इसके सिवाय अनेक साधु-साध्वियों की रचनाएँ अप्रकाशित भी हैं।

लेखन के साथ-साथ कई साधु-साध्वियाँ संस्कृत में आशु कविता में करने में भी सक्षम हैं।

अस्तु, तेरापंथ धर्मसंघ के साधु-साध्वियाँ शिक्षा, साधना और सेवा के क्षेत्र में और अधिक कीर्तिमान् स्थापित करते हुए शासन की सौरभ को सर्वत्र प्रसारित करें। इसी शुभाशंसा के साथ.....।

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org